नईदुनिया

Date: 08-06-19

संघीय ढांचे का निरादर

ममता को नीति आयोग की रीति-नीति से शिकायत हो, लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि वह उसकी बैठकों में शामिल होने से इनकार करें।

संपादकीय

पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी ने नीति आयोग की आगामी बैठक में शामिल होने से इनकार करके यही साबित किया कि वह अभी भी चुनाव के दौर वाली मानसिकता से मुक्त नहीं हो सकी हैं। शायद उन्हें इसकी परवाह नहीं कि प्रधानमंत्री की अध्यक्षता वाले नीति आयोग की बैठक का बहिष्कार करके वह पश्चिम बंगाल के हितों की ही अनदेखी करेंगी। यह वही ममता बनर्जी हैं, जो एक समय अपने नेतृत्व वाले राजनीतिक मोर्चे का नाम संघीय मोर्चा रख रही थीं, ताकि राज्यों के अधिकारों को प्राथमिकता देती हुई दिख सकें, लेकिन आज वह संघीय ढांचे की भावना के खिलाफ खड़ी होना पसंद कर रही हैं। ऐसा लगता है कि उन्हें जनादेश को स्वीकार करने में मुश्किल हो रही है। वह उन चंद मुख्यमंत्रियों में शामिल थीं, जिन्होंने मोदी सरकार के शपथ ग्रहण समारोह में शामिल होने से इनकार किया। यह भी ध्यान रहे कि वह चुनाव प्रचार के दौरान नरेंद्र मोदी को न केवल प्रधानमंत्री मानने से इनकार कर रही थीं, बल्कि उनसे फोन पर बात करना भी जरूरी नहीं समझ रही थीं। इसकी भी अनदेखी नहीं की जा सकती कि वह कई केंद्रीय योजनाओं को लागू करने से भी इनकार करती रही हैं। इनमें आयुष्मान भारत योजना भी है और देश के पिछड़े जिलों के विकास की योजना भी।

राजनीतिक खुन्नस में जनकल्याण और विकास की केंद्रीय योजनाओं से अपने राज्य को वंचित रखना सस्ती राजनीति के अलावा और कुछ नहीं। यह एक तरह की जनविरोधी राजनीति भी है। मुश्किल यह है कि ऐसी सस्ती और जनविरोधी राजनीति का परिचय अन्य अनेक दल भी देते रहते हैं। यह किसी से छिपा नहीं कि बीते दिनों द्रमुक नेताओं ने हिंदी थोपे जाने का हल्ला मचाकर किस तरह सस्ती राजनीति का प्रदर्शन किया। हिंदी के नाम पर द्रमुक और कुछ अन्य दलों के नेता किस तरह जनता को गुमराह कर रहे थे, इसका पता इससे चलता है कि तमिलनाडु उन राज्यों में प्रमुख है, जहां हिंदी को पठन-पाठन का हिस्सा बनाया गया है। बहुत दिन नहीं हुए, जब आंध्र प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री चंद्रबाबू नायडू ने सीबीआई को राज्य के मामलों की जांच करने की इजाजत देने से इनकार कर दिया था। आंध्र प्रदेश के बाद पश्चिम बंगाल ऐसा करने वाला दूसरा राज्य बना था। आखिर ऐसे मनमाने फैसले लेने वाले नेता किस अधिकार से संघीय ढांचे को मजबूती देने की जरूरत जता सकते हैं? पता नहीं ममता बनर्जी चंद्रबाबू नायडू के राजनीतिक पराभव से कोई सीख लेंगी या नहीं, लेकिन किसी भी मुख्यमंत्री को यह शोभा नहीं देता कि वह संकीर्ण राजनीतिक हितों को इतनी अहमियत दे कि राज्य के हित पीछे छूटते हुए दिखें। लोकसभा चुनावों के समय राहुल गांधी की तरह नीति आयोग को खत्म करने का वादा कर रहीं ममता बनर्जी को इस आयोग की रीति-नीति से शिकायत हो सकती है, लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि वह उसकी बैठकों में शामिल होने से इनकार करें। नीति आयोग को निष्प्रभावी संस्था बताते हुए उन्होंने

योजना आयोग को बहाल करने की मांग की है। यह तय है कि ऐसी मांग करते समय वह इससे भली तरह परिचित होंगी कि ऐसा नहीं होने जा रहा है।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 08-06-19

बदलाव या यथास्थिति ?

टी. एन. नाइनन

चुनाव समाप्त हो गए हैं और अब वक्त है नतीजों का विश्लेषण करने का। कहा जा रहा है कि लोगों ने बुर्जुआवाद के खिलाफ मतदान किया है और मोदी सरकार की योजनाओं के लाभार्थियों ने अपना समर्थन जताते हुए अपनी आकांक्षाओं को वोट के रूप में प्रकट किया है। यह भी कहा गया कि यह उन लोगों की जीत है जिनकी सांस्कृतिक जड़ें गहरी हैं जबकि उथले लोगों की हार हुई है। हो सकता है ये सब सच हों लेकिन बुनियादी बदलाव की इस कथा में यह देखना जानकारीपरक होगा कि विजेता किसे निशाना बनाते हैं और किसे नहीं?

हम वाम बनाम दक्षिण की बहस को बहुत पीछे छोड़ चुके हैं। वाम जड़ से उखड़ चुका है और इसकी जगह लेने का कोई गंभीर बाजारोन्मुखी प्रयास भी नहीं हो रहा। बल्कि कमजोर प्रदर्शन वाले, असमान तंत्र पर काबिज लोग पराजितों को और अधिक कल्याण योजनाओं की मदद से मनाना चाहते हैं। नवनिर्वाचित लोकसभा के सदस्यों की संपत्ति का माध्य 5 करोड़ रुपये है। उनकी औसत संपत्ति 20.9 करोड़ रुपये है। चुने गए नेताओं में से अधिकांश सबसे अमीर 0.1 फीसदी तबके से ताल्लुक रखते हैं। इन संपन्न लोगों की दृष्टि से देखें तो धर्म के आधार पर लोगों की लामबंदी के साथ लोक कल्याण का मिश्रण तात्कालिक बदलाव को अंजाम देता है, न कि ढांचागत।

सामंतवाद और वंशवाद का क्या: नामदार बनाम कामदार? यह जुमला नरेंद्र मोदी बनाम राहुल गांधी के कारण चल निकला लेकिन वरुण गांधी भी तो हैं, हरसिमरत कौर (घोषित परिसंपत्ति: 40 करोड़ रुपये), दुष्यंत सिंह (पता: सिटी पैलेस धौलपुर), राजकुमारी दियाकुमारी (पता: सिटी पैलेस जयपुर) और तमाम अन्य लोग जो सत्ताधारी गठबंधन की ओर से जीतने में सफल रहे हैं। सकारात्मक पहलुओं की बात करें तो आकांक्षी कामदार का विचार कारोबार तक जाता है जहां हजारों स्टार्टअप का उत्सव है। नया भारत तंग श्याओ फिंग की तरह इस बात पर यकीन करता है कि अमीर होना अच्छा है। यही कारण है कि नोटबंदी के बाद भी कारोबारी, मोदी के साथ सुरक्षित महसूस करते हैं। जिन नामदारों को निशाना बनाया जाना है वे केवल राजनीतिक प्रतिद्वंद्वी हैं। माल्या और नीरव मोदी जैसे दूर बैठे लक्ष्य भी सुरक्षित निशाना हैं।

इसका क्या अर्थ हुआ? दरअसल बदलाव की बातों के बीच भी हम अत्यंत रूढ़िवादी अंदाज में यथास्थिति के शिकार हैं। महत्त्वपूर्ण बदलाव लुटियन की दिल्ली में रहने वालों के नए अवतार के लिए आरक्षित हैं। यह नया अवतार खान मार्केट गैंग का है। यह जुमला भी उन सांसदों के लिए था जो संसद की साधारण कैंटीन के बजाय महंगे रेस्तरां में बैठना पसंद करते हैं। परंतु नरेंद्र मोदी ने इसका इस्तेमाल उपनिवेशवाद के बाद की ऐसी पीढ़ी के लिए कर दिया जो नेहरू-गांधी के

युग में फलीफूली। तब आरएसएस के एक विचारक ने कहा था कि मीडिया, संस्कृति और अकादमी से इस गैंग को खत्म किया जाएगा।

खुद ब खुद खत्म हो रहा यह समूह जो लड़ाई के लिए तैयार तक नहीं है, वह इतना महत्त्वपूर्ण क्यों है? क्योंकि यह अभी भी भारत के पुराने विचार की बात करता है। यह विभिन्न प्रकार की आस्थाओं और मान्यताओं की रक्षा करने वाली ऐसी सहिष्णु सभ्यता की बात करता है जो कमजोरों की रक्षा करना चाहती है, न कि मजबूती का जश्न मनाना। इस भावना को नष्ट किया जाना है। साथ ही अंग्रेजों के यहां पढ़े बैरिस्टरों द्वारा बनाए संविधान और उनके द्वारा थोपी औपनिवेशिक व्यवस्था को इस्लाम और उपनिवेश काल के पहले की देसी व्यवस्था से बदलना होगा। बाबर की अवैध संतानें खुद पर हुए हमले के बाद खामोश हैं। मैकाले के परपोतों में से कुछ आर्थर कसलर की किताब डार्कनेस ऐट नून के जेल में बंद चरित्र रुबाशोव की तरह हो गए हैं जो अपने विरोधी विचार को खत्म करने को तैयार था और अपनी गलतियों की सार्वजनिक आलोचना करता था। सबसे बड़ी आशंका अप्रासंगिकता की है। दिल्ली में बिना किसी मकसद के रहना दांते के नर्क के छठे चरण में रहने जैसा है जो धर्म विरोधियों के लिए आरक्षित था। अगर मोदी की अप्रत्याशित लोकप्रियता, भारत में ताकतवर और रसूखदार के शासन की बुनियाद बन रही है (सिंगापुर की तरह हम नेताओं का मजाक उड़ाने वालों को जेल में डाल ही रहे हैं), आलोचना करने वालों को गाली देने वाले ट्रोल आड़े हाथ ले रहे हैं, देसी मिथकों और वैज्ञानिक तथ्यों में घालमेल और भ्रम हो रहा है, इतिहास की किताबों में आरएसएस का नजरिया पढ़ाया जा रहा है, मजबूत संस्थान राजनीति के सामने घुटने टेक रहे हैं। इन बातों के बीच जोखिम उत्पन्न हो गया है कि कहीं हम ऐसी गलती न कर बैठें जिससे बचा जा सकता था।

Live हिन्दुस्तान .com

Date: 07-06-19

ब्याज दर और विकास दर

संपादकीय

मानसून ने केरल के तट से टकराने का अपना कार्यक्रम दो दिनों के लिए स्थगित कर दिया है, अब इसकी राहत भरी खबर 6 जून की बजाय 8 जून को आने की उम्मीद है। मानसून की बरसात भले स्थगित हो गई हो, लेकिन 6 जून को रिजर्व बैंक ने राहत की बौछार जरूर कर दी। उसने चार महीने में तीसरी बार रेपो दरें चौथाई फीसदी कम कर दीं। इसी के साथ ही रेपो दरें पिछले कई साल के सबसे निचले स्तर पर आ गई हैं। देश के बैंक जिस ब्याज दर पर रिजर्व बैंक से कर्ज हासिल करते हैं, उसे रेपो दर कहा जाता है। रेपो दर कम होने का अर्थ होगा बैंक अब कम दरों पर कर्ज दे सकेंगे। इसके साथ ही उद्योगों और होम लोन की ब्याज दरें कम होने के आकलन भी शुरू हो गए हैं। इस समय देश में जो आर्थिक स्थिति है और जो मंदी का माहौल है, उसके चलते ऐसी राहत का बेसब्री से इंतजार किया जा रहा था। हाल ही में बीती तिमाही की विकास दर पिछली 21 तिमाही में सबसे निचले स्तर पर रही है। महंगाई दर बहुत ज्यादा नहीं है, इसलिए रिजर्व बैंक इस काम को बडे आराम से अंजाम भी दे सकता था। उम्मीद की जा रही है कि रिजर्व बैंक की यह कर्ज नीति मंदी को

कुछ हद तक थामने का काम कर सकती है। कितनी, यह कहना अभी मुश्किल है। दिलचस्प बात यह है कि खुद रिजर्व बैंक ने अपनी नीति में सारी उम्मीद उस मानसून से बांधी है, जो फिलहाल दो दिन और लेट हो गया है। रिजर्व बैंक को उम्मीद है कि मानसून अगर सामान्य रहा, तो अर्थव्यवस्था पटरी पर आ जाएगी।

लेकिन हैरत की बात यह रही कि कर्ज नीति की घोषणा के तुरंत बाद ही शेयर बाजार अचानक मुंह के बल गिरा। पिछले आम चुनाव के नतीजों की घोषणा के बाद से ही बाजार लगातार ऊपर जा रहा था और बंबई शेयर बाजार का संवेदनशील सूचकांक तो 40 हजार की ऐतिहासिक बुलंदी को भी पार कर गया था। लेकिन नई कर्ज नीति की घोषणा होते ही वह टूटकर 553 अंक नीचे आ गया। इस साल बाजार में एक दिन में इतनी गिरावट पहली बार देखने को मिली है, वह भी तब, जब दुनिया भर के बाजारों में स्थितियां सामान्य होती दिख रही हैं। पूंजी बाजार के माहिरों का कहना है कि रिजर्व बैंक ने जो राहत दी, उसे बाजार पहले से ही मानकर चल रहा था और इसी हिसाब से उसने पिछले दो दिनों में उछाल भरी थी। इसलिए नई कर्ज नीति में उसे कुछ नया नहीं दिखा और वह एकाएक लुढ़क गया।

शेयर बाजार को अर्थव्यवस्था को कोई बहुत अच्छा सूचकांक नहीं माना जाता, इसलिए इससे किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुंचा जा सकता, पर बाजार की गति यह तो बताती ही है कि कर्ज नीति सारी समस्याओं का रामबाण नहीं है। पूरी अर्थव्यवस्था में कर्ज नीति एक महत्वपूर्ण, लेकिन छोटी भूमिका निभाती है। अर्थव्यवस्था को फिर से पटरी पर लाने और तेज विकास दर की ओर ले जाने में असल भूमिका सरकार को ही निभानी होगी। विकास दर का लगातार नीचे जाना और बेरोजगारी की दर का बढ़ना ऐसी समस्याएं हैं, जिन पर तुरंत ध्यान देना जरूरी है। ये चिंताएं रिजर्व बैंक की कर्ज नीति में भी दिखाई दी हैं और उम्मीद है कि अगले बजट में सरकार इसकी कोशिश करती दिखेगी। तब तक शायद मानसून को लेकर स्थिति भी स्पष्ट हो जाएगी, वैसे भी अर्थनीति को मानसून पर निर्भरता से आगे ले जाने की जरूरत है।